अध्यात्म संजीवनी

भक्तिमय भजन संग्रह

अध्यात्म संजीवनी

भक्तिमय भजन संग्रह

प्राचीन कवियों व ज्ञानियों द्वारा विरचित
आध्यात्मिक भक्ति गीतों व स्तुतियों का
अनुपम संकलन

: प्रकाशक :
श्री कुन्दकुन्द-कहान पारमार्थिक ट्रस्ट
मुम्बई

प्रथम संस्करण

२४वें तीर्थंकर वर्तमान शासन नायक बालब्रह्मचारी श्री महावीर भगवान के जन्म कल्याणक के पावन अवसर पर प्रकाशित, चैत्र शुक्ल १३ ०३ अप्रैल २०२३ –

मुमुक्षुता की प्रगटता व भावना ही इस पुस्तक का मूल्य है।

अध्यात्म संजीवनी में समाहित गीत सभी प्रमुख **AUDIO APP - Gaana, JioSaavan, Amazon Music, Spotify, Apple i-tune, Hungama, Google Music, Wynk Music, Youtube Music** आदि पर निःशुल्क उपलब्ध है।

प्राप्ति स्थान :

श्री कुन्दकुन्द-कहान पारमार्थिक ट्रस्ट
302, कृष्णकुंज, प्लॉट नं. 30, नवयुग सीएचएस लि.
वी.एल.मेहता मार्ग, विले पार्ले (पश्चिम), मुम्बई 400056
website : www.vitragvani.com, **e-mail:** info@vitragvani.com

श्री दिगम्बर जैन स्वाध्याय मंदिर ट्रस्ट
सोनगढ़ (सौराष्ट) 364250, फोन : 02846 244334, 244358
website : www.kanjiswami.org, **e-mail** : contact@kanjiswami.org

तीर्थधाम मंगलायतन
अलीगढ़-सासनी मार्ग, सासनी-204216 (हाथरस), उत्तरप्रदेश
मोबा. 9997996346, 9756633800
Website : www.mangalayatan.com; **e-mail :** info@mangalayatan.com

पंडित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट
ए-4, बापू नगर, जयपुर - 302015
फोन. 0141 2707458, 2705581
Website : www.ptst.in, **e-mail :** info@ptst.in

अहो भाव

वीतरागी देव-शास्त्र-गुरु इस पवित्र जैन शासन के मूल आधार हैं। धर्मी श्रावकों को इनके प्रति सहज ही परम उत्कृष्ट अहोभाव आता है। जिनधर्म के प्रति अपूर्व भावना से प्रेरित होकर हजारों वर्षों से प्राकृत, संस्कृत और वर्तमान में हिन्दी तथा अन्य प्रचलित देशीय भाषाओं में अनेक ज्ञानियों व आत्मार्थी कवियों ने आध्यात्मिक भक्ति साहित्य की रचना की है। इन कवि रत्नों में कविवर दौलतरामजी, श्री भूधरदासजी, श्री भागचन्दजी, श्री बुधजनजी, श्री द्यानतरायजी आदि द्वारा प्रसूत ये सभी भक्तियाँ भेदविज्ञान, वीतरागता व वैराग्य रस से सराबोर हैं। इन्हीं कवियों के भक्ति उपवन में से कुछ उत्कृष्ट भक्ति पुष्पों का संकलन यहाँ **अध्यात्म संजीवनी** के रूप में निबद्ध कर प्रस्तुत किया जा रहा है; अतः सर्वप्रथम हम उन सभी ज्ञानी कवियों के प्रति अपने श्रद्धा सुमन समर्पित करते हैं।

इन आध्यात्मिक पदों को आत्मार्थी भव्य जीवों की आत्मरुचि पुष्ट करने, चिरकाल तक सुरक्षित रखने एवं आगामी पीढ़ी तक पहुँचाने की पवित्र भावना से ही **श्री कुन्दकुन्द-कहान पारमार्थिक ट्रस्ट, मुम्बई** के द्वारा यह प्रयास किया गया है। आशा है कि आत्मार्थीजन इस अध्यात्म भक्ति अमृत का रसपान कर ज्ञान और वैराग्य की प्रेरणा लेंगे तथा इन भक्ति गीतों में समाहित भावों को समझकर निज स्वाध्याय में वृद्धि करेंगे।

प्रस्तुत अध्यात्म संजीवनी में ख्याति प्राप्त संगीतकार एवं गायक श्री आसित देसाई तथा सुरेश जोशी द्वारा संगीत की मधुर लहरियाँ तथा देश के कई प्रसिद्ध गायक कलाकारों द्वारा स्वर लहरियाँ प्रदान की गयी हैं; अतः हम उन सभी कलाकारों व सहयोगियों के प्रति भी अपना हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं।

- श्री कुन्दकुन्द-कहान पारमार्थिक ट्रस्ट, विले पार्ले, मुम्बई

अनुक्रमणिका

एलबम-7 अध्यात्म संजीवनी (भाग-7)

			पृष्ठ क्रं
1.	मेरा साई तो मों में...	पं.बुधजनजी	01
2.	सुनकर वाणी जिनवर की...	पं.बुधजनजी	03
3.	कब मैं साधु स्वरूप धरूँगा...	पं.भागचंदजी	05
4.	उठो रे सुज्ञानी जीव...	पं.बुधजनजी	07
5.	भाई! अब में ऐसा जाना...	पं.द्यानतरायजी	09
6.	निज हित कारज करना...	पं.दौलतरामजी	11
7.	मगन रहो रे...	पं.द्यानतरायजी	13
8.	आतम अनुभव आवै...	पं.भागचंदजी	15
9.	जानत क्यों नहि रे...	पं.दौलतरामजी	17
10.	जीवनि के परिणामनि की...	पं.भागचंदजी	19

अध्यात्म संजीवनी

भाग – ७

1

मेरा साई तो मों में...

मेरा साई तो मों में, नाहीं न्यारा, जाने सो जाननहारा ।
पहले खेद सह्यो बिन जानें, अब सुख अपरंपारा ।।
अनन्त चतुष्टय धारक ज्ञायक, गुण परजै द्रव सारा ।
जैसा राजत गंध कुटी में, तैसा मुझ में म्हारा ।।

मेरा साई तो मों में, नाहीं न्यारा.....

हित अनहित मम पर विकलप तैं, कर्म बंध भये भारा ।
ताहि उदय गति गति सुख दुख में, भाव किये दुखकारा ।।

मेरा साई तो मों में, नाहीं न्यारा.....

काललब्धि जिन आगम सेती, संशय भरम विदारा ।
'बुधजन' जान करावन कर्ता, हों हि एक हमारा ।।
मेरा साई तो मों में, नाहीं न्यारा, जाने सो जाननहारा...

मेरा साई अर्थात मेरा प्रभु तो मुझ में ही है अर्थात् मेरा ही स्वरूप होने के कारण मुझसे भिन्न नही है, और जो इस तत्त्व को जान लेता है वह भी न्यारा तत्त्व प्रभु बन जाता है।जब तक मुझे अपने ही भीतर रहने वाले प्रभु (आत्मा) का ज्ञान नही था तब तक मैंने घोर दुःख सहे परन्तु अब जब मुझे इसका ज्ञान हो गया है तब इस ज्ञान सुख का पार ही नही है।।टेक।।

अनन्त चतुष्टय के धारी, जिनके ज्ञान में समस्त द्रव्य-गुण-पर्याय एक साथ झलकते हैं, गंधकुटी में विराजमान अरहंत भगवान जैसा मुझ में ही मेरा स्वरूप है, उससे किंचित भी भिन्न नही है।।१।।

मैं निरंतर परसंयोगों के प्रति हित-अहित, इष्ट-अनिष्ट के विकल्प जाल में उलझा रहा, जिसके कारण अनादि से कर्मबंध करता आया हूँ और जब-जब उन कर्मो का उदय आता है तब-तब गतियों में संक्लेश परिणामों द्वारा अनन्त दुःख को भोगता आया हूँ।।२।।

परन्तु अब निश्चित ही शुभ काललब्धि के कारण जिनागम का सेवन हुआ है जिससे समस्त संशय एवं भ्रमरूप अज्ञान का नाश हो गया है। कविवर बुधजनजी कहते हैं कि जिनवाणी के अभ्यास से यह निश्चय हुआ है कि इस अलौकिक ज्ञान का कर्ता यह जीव स्वयं ही है और कोई इसका कारण नहीं हो सकता, अतः अब अपना कल्याण करने के उपाय में शीघ्र ही लगना चाहिये।।३।।

2

सुनकर वाणी जिनवर की...

सुनकर वाणी जिनवर की,
म्हारे हर्ष हिये न समाय जी ।। टेक ।।
काल अनादि की तपन बुझायी,
निज निधि मिली अथाहजी ।। 1 ।।
संशय, भ्रम और विपर्यय नाशा,
सम्यग्बुद्धि उपजाय जी ।।2।।
नर–भव सफल भयो अब मेरो,
'बुधजन' भेंटत पायजी ।। 3 ।।

समस्त राग–द्वेष के विकारों से रहित और केवलज्ञान के धारी श्रीजिनेन्द्र भगवान की दिव्यध्वनि सुनकर मेरे हृदय में अत्यधिक आनन्द का अनुभव हो रहा है।।टेक।।

हे प्रभो! आपकी दिव्यवाणी सुनकर मेरे अनादिकालीन अज्ञान रूपी ताप का आज अंत हो गया है और मुझे आत्मज्ञान रूपी निधि की प्राप्ति हो गई है।।१।।

हे परमात्मा! आपके द्वारा प्रतिपादित इस तत्त्वज्ञान से मेरे संशय और विपरीतमय अज्ञान का नाश हो गया है और सम्यग्ज्ञान प्रगट हो गया है।।२।।

कविवर बुधजनजी कहते हैं कि हे जिनेन्द्र देव! आपकी यह उपकारी वाणी सुनकर मेरा यह मनुष्य भव मानो आज सफल हो गया है क्योंकि अब संसार परिभ्रमण का कारण और उससे मुक्त होने का सच्चा मार्ग मुझे ज्ञात हो गया है।।३।।

3 कब मैं साधु स्वरूप धरूँगा...

कब मैं साधु स्वरूप धरूँगा।।
बन्धु वर्ग से मोह त्याग के, जनकादिक जन सौ उबरूँगा।
तुम जनकादि देह सम्बन्धी, तुमसों मैं उपजूँ न मरूँगा।।1।।
कब मैं साधु स्वरूप धरूँगा।।

श्री गुरु निकट जाय तिन वच सुन, उभय लिंग धर वन विचरूँगा।
अन्तर मूर्छा त्याग नग्न ह्वै, बाहिर ताकी हेत हरूँगा।।2।।
कब मैं साधु स्वरूप धरूँगा।।

दर्शन ज्ञान चरण तप वीरज, या विधि पंचाचार चरूँगा।
तावत निश्चल होय आप में, पर परिणामनि सौ उबरूँगा।।3।।
कब मैं साधु स्वरूप धरूँगा।।

चाखि स्वरूपानन्द सुधारस, चाह दाह में नांहि जरूँगा।
शुक्ल ध्यान बल, गुण श्रेणी चढ़ि, परमातम पद सौ न टरूँगा।।4।।
कब मैं साधु स्वरूप धरूँगा।।

काल अनन्तानन्त, यथारथ रह हूँ, फिर न विभान फिरूँगा।
'भागचन्द' निर्द्वन्द निराकुल, यासौं नहिं भव भ्रमण करूँगा।।5।।
कब मैं साधु स्वरूप धरूँगा।।

मैं दिगम्बर मुनिदशा कब धारण करूँगा, ऐसे पवित्र विचार भव्य जीवों के चित्त में सदा चलते रहते हैं।।टेक।।

मैं मित्र–बन्धुओं से मोह त्यागकर संसार और संसारीजनों से कब मुक्त होऊँगा। इस देह को जन्म देने वाले हे माता–पिता! अब मैं जन्म–मरण धारण नहीं करूँगा।।१।।

मैं वीतरागी मुनिराज के पास जाकर उनके वचनों को सुनकर द्रव्यलिंग और भावलिंगमयी मुनिस्वरूप धारणकर जंगल में विचरण करूँगा। मैं रागादि भाव का अभाव कर नग्न मुद्रा धारणकर समस्त कर्मों का नाश करूँगा।।२।।

मैं दर्शनाचार, ज्ञानाचार, चारित्राचार, तपाचार, वीर्याचार इन पाँच आचारों का नियमपूर्वक पालन करूँगा । मैं आत्मस्वरूप में निश्चल होकर अपने स्वरूप में पर के प्रति समस्त राग भाव का नाश करूँगा।।३।।

मैं अपने आत्मा के ध्यान रूप आनंद अमृत का पान करके, इच्छा–वाँछा रूपी अग्नि में नही जलूँगा एवं शुक्ल ध्यानपूर्वक गुणश्रेणी चढकर अनंत काल के लिये परमात्म पद को प्राप्त करूँगा और फिर कभी भी संसार में नही आऊँगा।।४।।

कविवर भागचन्द जी कहते हैं कि मैं बिना किसी बाधा के आकुलता रहित सिद्ध पद में अनन्त काल तक रहूँगा और फिर कभी भी स्वर्ग आदि गतियों में परिभ्रमण नहीं करूँगा।।५।।

4

उठो रे सुज्ञानी जीव...

उठो रे सुज्ञानी जीव, जिन गुण गावों रे।।टेक।।

निशि तो नसाय गई, भानु को उद्योत भयो।
ध्यान को लगावो प्यारे, नींद को भगावो रे।।1।।
उठो रे सुज्ञानी...

भव वन चौरासी बीच, भ्रमतौ फिरत नीच।
मोह जाल फन्द पर्‌यौ, जन्म मृत्यु पावो रे।।2।।
उठो रे सुज्ञानी...

आरज पृथ्वी में आय, उत्तम जन्म पाय ।
श्रावक कुल को लहाय, मुक्ति क्यों न जावो रे।।3।।
उठो रे सुज्ञानी...

विषयनि राचि राचि, बहु विधि पाप संचि।
नरकनि जायके, अनेक दुख पावौ रे।।4।।
उठो रे सुज्ञानी...

पर को मिलाप त्यागी, आतम जाप लागी।
सुविधि बतावै गुरु, ज्ञान क्यों न लावो रे।।5।।
उठो रे सुज्ञानी .....

हे ज्ञानी जीव! अब जाग्रत हो जाओ और श्री जिनेन्द्र भगवान के गुणों का स्तवन करो।।टेक।।

अज्ञान रूपी अंधकारमयी रात्रि विनष्ट हो गई है और ज्ञान रूपी सूर्य का उदय हो गया है। अब तुम आत्मा में ध्यानस्थ हो और मोह रूपी नींद को भगाओ।।१।।

चौरासी लाख योनियों के भव रूपी वन में तुम दीनहीन होकर भ्रमण कर रहे हो। मोह जाल में फंसकर जन्म-मरण के कष्ट उठा रहे हो। इसलिये हे ज्ञानी जीव अब मोह नींद से उठो।।२।।

तुमने निगोद से पृथ्वीकाय आदि कई गतियों में भ्रमण करते हुये, महाभाग्य से मनुष्य जन्म में श्रावक कुल प्राप्त किया है तो अब निर्वाण क्यों नहीं प्राप्त करते ? अर्थात् अब मोह नींद से उठकर शीघ्र ही मोक्ष को प्राप्त करो।।३।।

तुमने विषय भोगों में रच-पचकर अनेक विधि से पापों का बंध किया है और उसके फलस्वरूप नरक जाकर अनेक प्रकार के दुख भोगे हैं। इसलिये हे ज्ञानी जीव! अब तो जाग्रत हो जाओ।।४।।

तुम पर की संगति का त्याग कर आत्मा की आराधना में लग जाओ। वीतरागी संत हमें आत्मा के उद्धार की सम्यक विधि बता रहे हैं तो उसमें ज्ञान का प्रयोग क्यों नहीं करते ? अतः हे ज्ञानी जीव! अब जाग्रत हो जाओ और जिनेन्द्र भगवान के गुणों का स्तवन करो।।५।।

5

भाई! अब मैं, ऐसा जाना..

भाई! अब मैं, ऐसा जाना.....
पुद्गल द्रव्य अचेत भिन्न हैं, मेरा चेतन बाना।।
भाई! अब मैं, ऐसा जाना...

कल्प अनन्त, सहत दुख बीते, दुख को सुखकर माना।
सुख दुख दोऊ कर्म अवस्था, मैं कर्मन तैं आना।।1।।
भाई! अब मैं, ऐसा जाना....

जहाँ भोर थी तहाँ भई निशि, निशि की ठौर विहाना।
भूल मिटी, जिन पद पहिचान्या, परमानन्द निधाना।।2।।
भाई! अब मैं ऐसा जाना....

गूँगे का गुड़ खाय, कहे किमि, यद्यपि स्वाद पिछाना।
'द्यानत' जिन देख्या ते जानै, आत्म ज्ञान विज्ञाना।।3।।
भाई! अब मैं ऐसा जाना....

अरे भाई! मैंने अब यह जान लिया है कि पुद्गल चेतना रहित है, अचेतन है और मेरा आत्मा चेतन है। आत्मा व पुद्गल दोनों भिन्न-भिन्न हैं।।टेक।।

अनंत काल दुःख सहन करते हुये बीत गये और मैंने दुःख को ही सुख मान लिया। सुख और दुख दोनों ही कर्म की अवस्थायें हैं। मैं तो कर्मों से अन्य हूँ, अलग हूँ, भिन्न हूँ। मैंने अब यह जान लिया है।।१।।

जहाँ सुबह थी वहाँ रात हो गई। रात के बाद फिर सुबह हो गई, इसीप्रकार सुख-दुख, पुण्य-पाप का भी क्रम चलता रहता है, पर ये भी अलग-अलग नहीं हैं अपितु कर्म ही हैं। जब यह भूल मिट गई और श्री जिनेन्द्र भगवान के चरण कमलों का आश्रय लेकर निज को पहचाना तब परमानन्द की प्राप्ति हुई।।२।।

कविवर द्यानतराय जी कहते हैं कि जिस प्रकार गूँगा व्यक्ति गुड़ खाकर उसके स्वाद को तो जानता है परन्तु उसे व्यक्त करने में अर्थात् कहने में असमर्थ होता है। उसी भाँति मैंने अपना चेतन स्वरूप पहचाना, अनुभव किया पर उस अनुभूति को वचनों के द्वारा नहीं कहा जा सकता।

लोक में प्रसिद्ध कहावत है कि हंस और मेंढक दोनों जल में रहते हैं परन्तु दोनों में बहुत अंतर है, भेद है; इनका भेद जिसने देखा है, अनुभव किया है वह ही दोनों के वास्तविक स्वरूप को जानता है। उसी प्रकार जिसने आत्मा और जड़ के भेद को जान लिया है एवं अनुभव कर लिया है वह ही निश्चय से आत्मा को जानता है।।३।।

6

निज हित कारज करना...

निज हित कारज करना, रे भाई! निज हित कारज करना।
जनम मरन दुख पावत जातें, सो विधि बन्ध कतरना।।
निज हित कारज करना...

ज्ञान, दरश अरु राग, फरस रस, निज पर चिन्ह भ्रमरना।
सन्धि भेद बुधि छैनी तें करि, निज गहि, पर परिहरना।।1।।
निज हित कारज करना...

परिग्रही अपराधी शंके, त्यागी अभय विचरना।
त्यों पर चाह बन्ध दुखदायक, निज गहि, पर परिहरना।।2।।
निज हित कारज करना ...

जो भव भ्रमण न चाहै तो, अब सुगुरु सीख उर धरना।
'दौलत' स्वरस सुधा रस चाखो, ज्यों विनसे, भव भरना।।3।।
निज हित कारज करना ...

हे भाई! अपना आत्महित करो। जिन कर्मों के बन्ध से जन्म-मरण का दुख प्राप्त होता है उन कर्मों का नाश करो। हे भाई! अपना आत्महित करो।।टेक।।

ज्ञान-दर्शन और राग, स्पर्श, रस, आदि में अपने और पराये की पहचान करना। तुम ज्ञान रूपी छैनी से आत्म गुणों और पर द्रव्यों के गुणों के बीच पहचान करके आतमा को ग्रहण करना और पर का त्याग करना।।१।।

परिग्रहवान सदा अपराधी और शंकाशील होता है और परिग्रह का त्यागी निर्भय होकर विचरण करता है। जो इच्छा और बन्ध दुख देने वाले हैं ऐसे पर भावों को दूर करके अपने आतमा का ग्रहण करो।।२।।

कविवर पण्डित दौलतरामजी कहते हैं कि हे भाई! यदि संसार में परिभ्रमण नहीं करना चाहते हो तो श्रीगुरु के उपदेशों को हृदय में धारण करो और अपने आत्मरस के अमृत का स्वाद लो, जिससे संसार के दुखों का नाश हो जाये।।३।।

7

मगन रहो रे...

मगन रहो रे। शुद्धातम में, मगन रहो रे।।
राग द्वेष पर को उत्पात,
निश्चय शुद्ध चेतना जात।।
विधि निषेध को खेद निवार,
आप आप में आप निहार।।
मगन रहो रे। शुद्धातम में, मगन रहो रे।।1।।

बंध मोक्ष विकल्प करि दूर,
आनन्द कन्द चिदातम सूर।।
दर्शन ज्ञान चरण समुदाय,
'द्यानत' यह ही मोक्ष उपाय।।
मगन रहो रे। शुद्धातम में, मगन रहो रे।।2।।

हे भव्य! अपने शुद्धात्म तत्त्व और उसके स्वरूप चिन्तवन में तुम मग्न रहो।।टेक।।

ये राग–द्वेष तो पर द्रव्य के विकार हैं, पर से उत्पन्न हुये हैं। निश्चय से तो तुम्हारी जाति चेतन है अत: इष्ट– अनिष्ट के खेद का त्याग करो। अपने आप में केवल अपने आत्म स्वरूप का चिन्तन करो, उसे ही निरखो, देखो और जानो पहचानो। ।।१।।

कविवर द्यानतरायजी कहते हैं कि कर्म बंध और मोक्ष, दोनों का विकल्प छोड़ दो। तब सभी विकल्पों से परे यह चैतन्य आत्मा आनंद का पुंज, सूर्य के समान अनुभव में आयेगा । वास्तव में तो दर्शन, ज्ञान और चारित्र की एकता होना ही सम्यक् का उपाय है।।२।।

8

आतम अनुभव आवै...

आतम अनुभव आवै, जब निज आतम अनुभव आवै।।
तब और कछू न सुहावै, जब निज आतम अनुभव आवै।।टेक।।
जिन आज्ञा अनुसार प्रथम ही तत्त्व प्रतीति अनावै।
वर्णादिक रागादिक तें, निज चिन्ह भिन्न फिर ध्यावै।।1।।
जब निज आतम अनुभव आवै....
मतिज्ञान फरसादि विषय तज, आतम सम्मुख धावै।
नय, प्रमाण, निक्षेप, सकल, श्रुतज्ञान, विकल्प नसावै।।
जब निज आतम अनुभव आवै....
चिद्ऽहं, शुद्धोऽहं इत्यादिक, आप माँहि बुधि आवै।।
तन पै वज्रपात होते हू, नेक न चित्त डुलावै।।2।।
जब निज आतम अनुभव आवै....
स्व संवेद आनन्द बढ़ै अति, वचन कह्यो नहिं जावै।
दर्शन ज्ञान चरन तीनों विच, इक स्वरूप ठहरावै।।3।।
जब निज आतम अनुभव आवै....
चित् कर्ता, चित् कर्म भाव, चित् परिणति क्रिया कहावै।
साधन, साध्य, ध्यान, ध्येयादिक, भेद कछू न दिखावै।।4।।
जब निज आतम अनुभव आवै....
आत्म प्रदेश अदृष्ट तदपि, रस स्वाद प्रगट दरसावै।
ज्यों मिश्री दीसत न अन्ध को, सपरस मिष्ट चखावै।।5।।
जब निज आतम अनुभव आवै.....
जिन जीवन के संसृति, पारावार पार निकटावै।
'भागचन्द' ते सार अमोलक, परम रतन वर पावै।।6।।
जब निज आतम अनुभव आवै.....

जब अपनी आत्मा का अनुभव हो जाता है तब और कुछ अच्छा नहीं लगता।।टेक।।

जिनेन्द्र भगवान की वाणी के अनुसार सर्वप्रथम तत्त्वों के प्रति श्रद्धा होती है तब राग और वर्ण आदि से अपनी आत्मा को भिन्न पहचानकर उसका ध्यान करता है।।१।।

मति ज्ञान, स्पर्श आदि विषयों को त्यागकर आत्मा की प्राप्ति का पुरुषार्थ करता है। नय, प्रमाण, निपेक्ष और श्रुत ज्ञान के समस्त विकल्पों का नाश करता है।।२।।

मैं चैतन्य हूँ, मैं शुद्ध हूँ इत्यादि रूप से आत्मा में ज्ञान स्वयं लीन हो जाता है, तब यदि शरीर पर व्रजपात भी हो जाये तो भी उसका मन रंच मात्र भी चलायमान नहीं होता।।३।।

अपनी आत्मा की अनुभूति का आनंद बहुत बढ जाता है जिसका वर्णन वाणी से नहीं कहा सकता। दर्शन, ज्ञान, चारित्र इन तीनों के भेद समाप्त होकर एकरूपता हो जाती है।।४।।

आत्मानुभव के काल में चैतन्य ही कर्ता, कर्म तथा उसी की परिणति क्रिया कहलाती है, उस समय साध्य-साधना, ध्यान-ध्याता आदि किसी भी प्रकार भेद नहीं रहता ।।५।।

यद्यपि आत्मानुभव के समय आत्मा के प्रदेश दिखाई नहीं पड़ते परन्तु आत्मा के अनुभव का स्वाद प्रत्यक्ष वेदन में आता है, जिस प्रकार अन्धे को मिसरी दिखाई नहीं देती परन्तु उसकी मिठास का अनुभव होता है।।६।।

कविवर भागचन्दजी कहते हैं कि आत्मानुभवी जीवों के संसार भवसागर का किनारा निकट आ जाता है। अनुभव रूपी परम रत्न की प्राप्ति करने वाले के लिये यह अमूल्य जीवन का सार है।।७।।

9

जानत क्यौं नहिं रे...

जानत क्यौं नहिं रे,
हे नर आतमज्ञानी।।
रागदोष पुद्गल की संपति,
निहचै शुद्धनिशानी।।जानत.।।टेक।।

जाय नरकपशुनरसुरगति में,
यह परजाय विरानी।
सिद्धसरूप सदा अविनाशी,
मानत विरले प्रानी।।1।।जानत.।।

कियौ न काहू हरै न कोई,
गुरु–शिख कौन कहानी।
जन्म मरन मलरहित विमल है,
कीचबिना जिमि पानी।।2।।जानत.।।

सार पदारथ है तिहुँ जग में,
नहिं क्रोधी नहिं मानी।
'दौलत' सो घटमाहिं विराजे,
लखि हूजे शिवथानी।।3।।जानत.।।

हे मानव! यह आत्मा ज्ञान स्वरूप है, ज्ञानी है। तू यह बात क्यों नहीं जानता है। निश्चय से आत्मा की निशानी तो उसकी शुद्धता ही है । राग–द्वेष पुद्गल के कारण से होते हैं, अत: ये तेरी नहीं बल्कि पुद्गल की सम्पत्ति हैं।।टेक।।

यह जीव नरक, तिर्यंच, मनुष्य व देव गति में जाता है परंतु ये सब पर्यायें अपनी नहीं हैं । कुछ विरले विवेकी पुरुष ही यह जानते हैं कि यह आत्मा सिद्ध स्वरूप है, कभी नाश को प्राप्त नहीं होता।।१।।

कोई किसी का कुछ नहीं करता, किसी का हरण नहीं करता, कौन गुरु है और शिष्य – ये सभी सम्बन्ध कहने मात्र के हैं। जैसे कीचड के बिना पानी निर्मल होता है उसी तरह आत्मा जन्म–मरण के मैल से रहित है, निर्मल है।।२।।

तीन लोक में यह आत्मा ही सार रूप पदार्थ है, जो न क्रोधी है और न ही मानी । पण्डित दौलतरामजी कहते हैं कि वह आत्मा सदैव ही तेरे अंदर में विराजमान है, जिसने उसे देखा, जाना व पहिचाना वह ही मोक्ष को प्राप्त हो जाता है, मोक्ष के निवास को प्राप्त करता है।।३।।

10

जीवनि के परिणामनि की...

जीवनि के परिणामनि की यह
अति विचित्रता देखहु प्राणी ।

नित्य निगोद मांहि तैं कढ़िकर नर पर्याय पाय सुखदानी।
समकित लहि अन्तर्मुहूर्त में, केवल पाय वरै शिवरानी।।1।।
जीवनि के परिणामनि की...

मुनि एकादश गुणस्थान चढ़ि, गिरत तहाँ तें चित भ्रम ठानी।
भ्रमत अर्द्ध पुद्गल परावर्तन, किंचित् उन काल परमानी।।2।।
जीवनि के परिणामनि की...

निज परिणामन की संभाल में, तातैं गाफिल मत ह्वै प्राणी।
बंध मोक्ष परिणामनि ही सों, कहत सदा श्री जिनवर वाणी।।3।।
जीवनि के परिणामनि की...

सकल उपाधि निमित्त भावनि सों, भिन्न, सु निज परिणति को छानी।
ताहि जान रुचि ठानि होहु थिर, 'भागचन्द' यह सीख सयानी।।4।।
जीवनि के परिणामनि की...

हे प्राणी! जीवों के परिणामों की यह अति विचित्रता तो देखो।।टेक।।

कहीं तो इस जीव ने नित्य निगोद से निकलकर सुखमयी नर पर्याय को प्राप्त किया और अन्तर्मुहुर्त में ही सम्यग्दर्शन प्राप्त कर तथा केवलज्ञान प्रगटकर मोक्ष भी प्राप्त कर लिया।।१।।

दूसरी ओर कोई मुनिराज ग्यारहवें गुणस्थान तक चढ़कर भी गिर जाते हैं और वापस मिथ्यात्व अवस्था को प्राप्त कर लेते हैं और कुछ समय कम अर्द्धपुद्गल परावर्तन काल तक संसार ही में परिभ्रमण करते हैं।।२।।

इसलिये जिनेन्द्र भगवान कहते हैं कि हे विषयों में गाफिल जीव ! सावधान हो जाओ और अपने परिणामों की संभाल करो क्योंकि बंध और मोक्ष दोनो परिणामों से ही होता है।।३।।

कविवर भागचन्दजी कहते हैं कि समस्त कर्मोपाधियों के निमित्त से होने वाले भावों से भिन्न अपनी सम्यक् परिणति को पहचानो और उसे जानकर, निश्चयकर उसमें रुचिपूर्वक स्थिर हो जाओ यह ही जिनधर्म की शिक्षाओं का सार है।।४।।

ADHYATAM SANJEEVANI

· Songs Available On AUDIO APP ·

Shree Kundkund-Kahan Parmarthik Trust

302, Krishna Kunj, V. L. Mehta Marg, Vile Parle (West)

Mumbai - 400 056 INDIA

Tel. : +91 22 2613 0820 / 2610 4912

info@vitragvani.com www.vitragvani.com / vitragvanee /c/vitragvanii